को तैयार हो गया। इसके बाद उसने क़ंदहार अभियान के लिए विस्तृत तैयारी का हुक्म जारी कर दिया। इस ख़तरे का मुकाबला करने के लिए शाह जहां काबुल आ धमका और एक बहुत बड़े तोपखाने के साथ दारा को क़ंदहार की रक्षा करने का दायित्व सौंपा। दारा का सौभाग्य कहिए कि दो साल की तैयारी के बाद शाह शफी जब 1642 में क़ंदहार-विजय के लिए निकला तो रास्ते में ही वह बीमार हो गया और उसकी मृत्यु हो गई। ईरान में फिर अव्यवस्था फैल गई, और उसकी ओर से उपस्थित खतरा फिलहाल टल गया। अब शाह जहां अपनी अन्य महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति की ओर ध्यान देने को मुक्त था।

शाह जहां का बल्ख अभियान

शाह जहां के बल्ख अभियान (1646) को बहुधा मुगल विदेश नीति का उच्चतम शिखर माना गया है। परंतु साथ ही उसकी विफलता को कभी-कभी मुगल सैनिक शक्ति के ह्रास के द्योतक के रूप में भी चित्रित किया जाता है। मगर इस अभियान को अब्दुल्ला खां ऊज़बेक की मृत्यु (1598) के बाद से तूरान के साथ मुगलों के संबंधों और उनकी समग्र विदेश नीति के परिप्रेक्ष्य में देखना चाहिए।

जैसा कि हम देख चुके हैं, अब्दुल्ला ऊज़बेक की मृत्यु के बाद की अनिश्चितता के दौर के उपरांत इमाम क़ुली को, जो शैबानी वंश से भिन्न शाखा का था, बल्ख और बुखारा का शासक घोषित कर दिया गया (1611)। लेकिन उदारता की झोंक में, जिसके लिए उसे बाद में काफी पछतावा हुआ, उसने बल्ख़ और बदख़्शां अपने भाई नज़र मुहम्मद को सौंप दिया और बुखारा को अपने नियंत्रण में रखा। कालांतर में नज़र मुहम्मद इन दो प्रदेशों का लगभग स्वतंत्र शासक बन बैठा। ऊज़बेक खानत का यह विभाजन मुगलों के अनुकूल पड़ता था, यद्यपि नज़र मुहम्मद की गद्दीनशीनी के बाद लंबे समय तक ऊज़बेकों और मुगलों के बीच कोई कूटनीतिक संपर्क नहीं हुआ। इस दौर में ईरान के साथ मुगलों का संबंध बहुत मधुर था। लेकिन हम जहांगीर को अपने वतन फ़रग़ाना इत्यादि पर फिर से अधिकार करने के बार-बार घोषित किए जानेवाले इरादे को अंजाम देने के लिए कुछ करते नहीं देखते हैं।

ज्यों-ज्यों सफ़वियों की शक्ति बढ़ती गई, ऊज़बेकों में ईरानियों के इरादों के बारे में आशंका घर करती गई। 1621 में इमाम क़ुली की मां ने एक सद्भावना-पत्र तथा मध्य एशिया के कुछ विरल उत्पादों के उपहार के साथ नूरजहां के पास एक दूतमंडल भेजा। नूरजहां ने कुछ उपहारों के साथ एक जवाबी दूत-मंडल भेजा। उसके बाद इमाम क़ुली और जहांगीर के बीच औपचारिक स्तर पर दूतमंडलों का आदान-प्रदान हुआ।

Scanned with CamScanner

ईरानियों की क़ंदहार-विजय (1622) के बाद शाह जहां के विद्रोह और जहांगीर के गिरते हुए स्वास्थ्य के कारण मुगल साम्राज्य में अनिश्चितता फैली। फलतः मुगलों के प्रति ऊज़बेकों का रुख बदल गया। इमाम क़ुली ने ईरान के शाह से मित्रता स्थापित करने के उद्देश्य से उसके पास एक दूतमंडल भेजा। इसके साथ ही नज़र मुहम्मद ने काबुल पर अधिकार करने का प्रयत्न आरंभ कर दिया। नज़र मुहम्मद के एक प्रमुख सेनापति यलिंगतोश ने काबुल पर आक्रमण किया, लेकिन एक शक्तिशाली तोपखाने से लैस मुगलों के हाथों उसे करारी हार खानी पड़ी। उसके बाद यलिंगतोश ने अफगानिस्तान के उत्तर-पश्चिम में हज़ारा और अफगान लोगों में असंतोष भड़काने की कोशिश की। वह खुद गज़नी पर चढ़ आया। लेकिन उसके दोनों अभियान विफल हो गए। काबुल को अति सुरक्षित मानकर ऊज़बेकों ने फिर अपना रुख बदला। उन्होंने दोस्ती के कसमों-वादों से भरा संदेश भेजा, जिसकी मंशा वस्तुतः यलिंगतोश के आचरण के लिए माफी मांगना थी। बल्कि इमाम क़ुली ने तो फारस के खिलाफ खुरासान में ऊज़बेकों और मुगलों के संयुक्त अभियान का भी प्रस्ताव रखा, ताकि उसे दोनों आपस में बांट लें। स्पष्ट ही यह कोई गंभीर प्रस्ताव नहीं था, बल्कि उसका उद्देश्य मुगलों और ऊज़बेकों के बीच अच्छे रिश्तों पर जोर देना था। बहरहाल, प्रस्ताव के प्रति जहांगीर ने कोई गंभीरता नहीं दिखाई। इसके कुछ ही दिन बाद उसकी मृत्यु हो गई।

जहांगीर की मृत्यु के बाद 1628 में नज़र मुहम्मद ने काबुल पर एक और आक्रमण किया। उसने नगर पर कब्जा कर लिया और किले पर घेरा डाल दिया। लेकिन मुगलों ने शीघ्रता से कुमकें भेजी, और जब मुगल फौजें नजदीक पहुंच गईं तो नज़र मुहम्मद भाग खड़ा हुआ। प्रतिशोध में मुगलों ने बामियान पर कब्जा कर लिया। साथ ही शाह जहां ने मित्रता के वचन को दोहराते हुए इमाम क़ुली के पास अपना एक दूत भेजा, और इस प्रकार नज़र मुहम्मद को अलग-थलग कर दिया।

इमाम क़ुली के साथ शाह जहां का संबंध अच्छा बना रहा, लेकिन नज़र मुहम्मद ने शाह जहां की गद्दीनशीनी पर वर्षों के विलंब के बाद उसे बधाइयां देते हुए 1633 में उसके पास अपना दूत भेजा। अगले छह वर्षों के दौरान दोनों दरबारों के बीच अक्सर दूतों का आदान-प्रदान होता रहा, और जैसा कि हम देख चुके हैं, शियापंथी सफ़वियों के खिलाफ ऊज़बेकों, मुगलों और उस्मानलियों के त्रिपक्षीय गठबंधन के विचार में एक बार फिर प्राण फूंकने की कोशिश की गई। लेकिन शाह जहां को ऊज़बेकों के वादों पर कोई भरोसा नहीं था। इसके अलावा, वह ईरान के साथ मित्रता की नीति से विचलित होने को भी तैयार नहीं था। अपने ही प्रयत्नों से मुर्शिद क़ुली खां को अपने पक्ष में लाकर 1638 में शाह जहां ने क़ंदहार को फिर से हासिल कर लिया, जो एक सुयोग्य सेनापति तथा कुशल इंजीनियर भी था।

Scanned with CamScanner

सन् 1639 के इमाम क़ुली अंधा हो गया। नज़र मुहम्मद को संपूर्ण ऊज़बेक राज्य पर अपना नियंत्रण स्थापित करने का यह अच्छा मौका लगा। थोड़ी-बहुत लड़ाई के बाद इमाम क़ुली को भागकर ईरान में शरण लेनी पड़ी। ईरान से वह मक्का चला गया। इस प्रकार सारी ऊज़बेक खानत नज़र मुहम्मद के अधीन एक हो गई। नज़र मुहम्मद महत्वाकांक्षी और निरंकुश शासक साबित हुआ। उसने कड़े कदम उठाकर प्रशासन में चुस्ती लाने की कोशिश की, और बहुत से आलिमों को दी गई राजस्व-मुक्त जमीनें वापस ले लीं। उसने प्रादेशिक विस्तार की नीति पर भी अमल आरंभ कर दिया, और ख्वारिज्म पर अधिकार करने की कोशिश की। जब वह ख्वारिज्म अभियान में व्यस्त था, तभी ताशकंत में विद्रोह भड़क उठा। उसके बेटे अब्दुल अज़ीज़ को विद्रोहियों को दबाने के लिए भेजा गया, लेकिन वह उन्हीं से मिल गया और बुखारा का खान घोषित कर दिया गया। नज़र मुहम्मद अपने अंतिम शरणस्थल बल्ख़ को लौटा। लेकिन उसके बेटे ने वहां भी उसका पीछा नहीं छोड़ा। अब नज़र मुहम्मद ने शाह जहां से सहायता की अपील की। यह घटना 1645 की है। शाह जहां ने तत्परता से अपील स्वीकार कर ली। वह लाहौर से काबुल पहुंचा, और नज़र मुहम्मद की सहायता के लिए शाहज़ादा मुराद के अधीन एक बड़ी फौज तैनात कर दी। 50,000 घुड़सवारों, बंदूकचियों और तोपचियों सहित 10,000 पैदल सैनिकों तथा राजपूतों की एक टुकड़ी से युक्त यह फौज 1646 के मध्य में काबुल से रवाना हुई। शाह जहां ने मुराद को सावधानी के साथ हिदायत कर दी थी कि नज़र मुहम्मद से आदर से पेश आए और अगर वह संयम और विनम्रता का व्यवहार करे तो उसे बल्ख़ वापस दे दे। इसके अलावा, उसे यह निर्देश भी दिया गया था कि अगर नज़र मुहम्मद समरक़ंद और बुख़ारा पर फिर से अधिकार करना चाहे तो वह उसे हर तरह की सहायता दे। स्पष्ट था कि शाह जहां बल्ख़ और बुख़ारा में ऐसा दोस्ताना शासन चाहता था जो सहायता और समर्थन के लिए मुगलों का मुखापेक्षी हो। लेकिन मुराद के उतावलेपन से सारी योजना पर पानी फिर गया। नज़र मुहम्मद से निर्देश प्राप्त करने की प्रतीक्षा किए बिना वह सीधे बल्ख़ पर चढ़ आया, अपने लोगों को बल्ख़ के उस किले में प्रवेश करने का हुक्म दे दिया जिसमें नज़र मुहम्मद रह रहा था और उससे सख्ती से कहला दिया कि नज़र मुहममद उसकी खिदमत में खुद पेश हो। नज़र मुहम्मद की समझ में नहीं आ रहा था कि सचमुच शाहज़ादे का इरादा क्या है, सो वह भाग खड़ा हुआ। मुगलों के सामने बल्ख़ पर अधिकार करने और नाराज और विरोध पर आमादा जनता के मुकाबले उस पर कब्जा बनाए रखने के अलावा कोई चारा नहीं रह गया। नज़र मुहम्मद का कोई विकल्प भी आसानी से सामने नहीं आ रहा था। अब्दुल अज़ीज़ ने मावरा-उन्-नहर में ऊज़बेक कबीलों को मुगलों के खिलाफ भड़का दिया, और 1,20,000 की सेना एकत्र करके आमू दरिया के उस पार डट गया। इस बीच घर की याद में बेचैन मुराद ने लौटने की इजाज़त मांगी। समकालीन इतिहासकार लाहौरी के

Scanned with CamScanner

अनुसार, 'शाहज़ादे के साथ आए बहुत-से अमीरों और मनसबदारों ने शाहज़ादे की इस अवांछनीय इच्छा से सहमति प्रकट की। घर के प्रति स्वाभाविक मोह, हिंदुस्तान के तौर-तरीकों और रीति-रिवाजों से लगाव, बल्ख़ के लोगों और तौर-तरीकों से अरुचि और जलवायु की कठोरता, ये सारी बातें इस इच्छा के पीछे काम कर रही थीं।' शाह जहां बहुत नाराज हुआ और मुराद को कुछ समय के लिए अपने मनसब तथा सुल्तान की जागीर से वंचित करके उसे दंडित किया। वज़ीर सादुल्ला खां को प्रशासनिक समस्याओं के समाधान के लिए बल्ख़ भेजा गया। लेकिन वह भी मुगल और राजपूत सरदारों का रुख नहीं बदल पाया। सैनिक समस्या के समाधान के लिए शाह जहां ने अमीर-उल-उमरा अली मर्दान खां के साथ औरंगजेब को तैनात किया।

औरंगजेब ने आमू दरिया पार करने की कोई कोशिश नहीं की, बल्कि नदी के पार एकत्र अब्दुल अज़ीज़ की सेना से नदी को बचाने का भी प्रयत्न नहीं किया। आमू दरिया रक्षा-पंक्ति का काम कर भी नहीं सकती थी, क्योंकि बल्ख़ के इर्द-गिर्द उसे कई जगहों से आसानी से पार किया जा सकता था। इसलिए औरंगजेब ने सामरिक महत्व के ठिकानों पर मजबूत रक्षक-दल तैनात कर दिए और तोपखाना सहित मुख्य सेना को अपने पास रखा, ताकि जिस ठिकाने पर भी खतरा उपस्थित हो वहां वह जल्दी पहुंच सके। इस प्रकार मुगलों ने अपनी सेना को बहुत अच्छी तरह विन्यस्त कर दिया था। अब्दुल अज़ीज़ आमू दरिया पार करके बल्ख़ की ओर बढ़ा, लेकिन उसने सामने औरंगजेब की सेना को सन्नद्ध पाया। एक चलायमान युद्ध में बल्ख के प्रवेश-द्वार के बाहर मुगल तोपखाने का सामना करने में असमर्थ ऊज़बेक सेना के पैर उखड़ गए (1647)। ऊज़बेक सैन्य-बल फना-सा हो गया और अब्दुल अज़ीज़ लगभग अकेला रह गया।

बल्ख की विजय और ऊज़बेक सैन्य बल के बिखराव से शाह जहां को, यदि वह चाहता, तो समरक़ंद और बुख़ारा पर आक्रमण करने का सुनहला अवसर मिल गया था। इससे पहले शाह अब्बास द्वितीय के नाम अपने एक पत्र में शाह जहां ने कहा था कि बल्ख़ की जीत समरक़ंद और बुख़ारा की विजय का आरंभिक पड़ाव है; साथ ही उसने शाह से अनुरोध किया था कि वह नज़र मुहम्मद को मक्का जाने दे ताकि वह बल्ख में मुगलों के रास्ते का कांटा न बना रहे। शाहज़ादा मुराद को बल्ख में डटे रहने पर राजी करने के लिए उसने उसे समरक़ंद और बुख़ारा का मुगल प्रतिनिधि (वाइसराय) नियुक्त करने का भी वचन दिया था। लेकिन मालूम होता है, स्थानीय आबादी के विरोधी तेवर, घुमक्कड़ ऊज़बेक सैनिक टोलियों से निबटने की कठिनाई और मुगल तथा राजपूत सरदारों की बल्ख में टिके रहने की अनिच्छा के कारण शाह जहां बल्ख में एक दोस्ताना शासन को पदस्थापित देखने की अपनी पुरानी नीति पर वापस आ गया था। बुख़ारा से अबुल अज़ीज़ और ईरान से नज़र मुहम्मद दोनों ने

Scanned with CamScanner

शाह जहां से उन-का राज्य लौटा देने का निवेदन किया। काफी सोच-समझ कर शाह जहां ने नज़र मुहम्मद के पक्ष में फैसला किया। लेकिन उससे पहले माफी मांगने और औरंगजेब की खिदमत में पेश होने को कहा गया। यह एक गलती थी, क्योंकि अभिमानी ऊज़बेक शासक खुद को इस तरह गिराएगा, इसकी संभावना नहीं थी, खास तौर से इसलिए कि वह जानता था कि मुगलों के लिए लंबे समय तक बल्ख में टिके रहना असंभव है। नज़र मुहम्मद के खुद पेश होने का बेकार इंतजार करने के बाद मुगल सेना अक्तूबर 1647 में बल्ख से रवाना हो गई, क्योंकि ठंड का मौसम आया ही चाहता था और बल्ख को आपूर्ति नहीं पहुंच रही थी। ऊज़बेक सैनिकों की आसपास मंडराती वैरी टोलियों के कारण यह वापसी लगभग शिकस्त में तब्दील हो गई। मुगलों को भारी क्षति उठानी पड़ी, लेकिन औरंगजेब की दृढ़ता ने उन्हें विनाश से बचा लिया।

शाह जहां के बल्ख अभियान को लेकर आधुनिक इतिहासकारों के बीच काफी विवाद रहा है। ऊपर के विवरण से यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि शाह जहां मुगल सरहद को तथाकथित 'वैज्ञानिक सीमा', अर्थात् आमू दरिया तक ले जाने की कोशिश नहीं कर रहा था। जैसा कि हम देख चुके हैं, आमू दरिया कोई रक्षणीय सीमा नहीं थी। यद्यपि शाह जहां समरक़ंद और बुख़ारा पर आक्रमण करने और इस प्रकार अपने 'वतन' पर फिर से अधिकार करने का विचार मन में पाल रहा था तथापि उसे कभी गंभीर प्रयत्न का रूप नहीं दिया गया। इसके अलावा, बल्ख अभियान के पीछे अतिरिक्त प्रदेश की प्राप्ति की इच्छा की भी प्रेरणा नहीं थी। बल्ख़ के आसपास का इलाका तो उपजाऊ था, लेकिन बदख़्शां पर्वतीय प्रदेश था, जिसमें बीच-बीच में पड़नेवाली संकरी घाटियों की रक्षा करना कठिन था। इसके अतिरिक्त, इन दोनों प्रदेशों से इतना राजस्व भी प्राप्त नहीं होता था कि उसके कारण मुगल उनकी ओर आकृष्ट होते। लाहौरी के अनुसार, बदख़्शां के संसाधन एक बड़े मुगल सरदार के वेतन के लिए भी पर्याप्त नहीं थे।

समकालीन मुगल इतिहासकारों ने शाह जहां के बल्ख़ अभियान का औचित्य इस आधार पर प्रतिपादित करने का प्रयत्न किया है कि अतीत में ऊज़बेकों के कारण काबुल और गज़नी खतरे में पड़ गया था और शाही प्रदेश अर्थात् काबुल पर हमला करने की 'धृष्टता' करने के लिए नज़र मुहम्मद को सबक सिखाना जरूरी था। यह दलील भी दी गई कि शाह जहां बल्ख और बदख़्शां के लोगों को उन अलमान खानाबदोश कबीलों के खिलाफ संरक्षण प्रदान करना चाहता था जिन्होंने अब्दुल अज़ीज़ की ओर से उस क्षेत्र में लूट-पाट मचाई थी। अन्य इतिहासकार ऊज़बेकों को अत्याचारी और पापी बताते हैं, जिन्होंने इबादत की जगहों को नापाक किया था।

लेकिन इनमें से कोई भी दलील विश्वासोत्पादक नहीं लगती। एक आधुनिक

Scanned with CamScanner

इतिहासकार, रियाज़ुल इस्लाम शाह जहां पर 'जोखिमबाजी' की नीति का अनुसरण करने का आरोप लगाते हैं, क्योंकि उसके पीछे 'मध्य एशिया में तैमूरी सत्ता के उचछेद के लगभग डेढ़ सदी बाद उसे फिर से स्थापित करने के विकृत मोह की प्रेरणा थी।' सावधानी के साथ किए गए अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि शाह जहां मूलतः काबुल-क़ंदहार सीमा-रेखा की रक्षा करने की नीति से प्रेरित था, क्योंकि संयुक्त और शक्तिशाली ऊज़बेक खानत उसके लिए खतरा बन सकती थी। ऊज़बेकों के बीच भड़का गृह-युद्ध मुगलों के लिए नज़र मुहम्मद को अपने बेटे के खिलाफ शह देकर ऊज़बेकों को विभाजित रखने का सुनहला अवसर था। इसके अतिरिक्त, इसके एक आनुषंगिक परिणाम के रूप में मुगल बदख्शां को हासिल करने की आशा रखते थे, 'जो अपने-आप में बहुत महत्वपूर्ण तो नहीं था लेकिन उपेक्षनीय भी नहीं था।' इस प्रकार शाह जहां की नीति यथार्थ राजनीति पर आधारित थी। दुर्धर्ष मुगल सैन्य बल की सहज सुलभता से उसके मन में बल्ख़ को मुगल साम्राज्य का अंग बना लेने की इच्छा भी हिलोरें लेने लगीं, किंतु कटु यथार्थ से सामना होते ही वह फिर अपनी पुरानी नीति पर लौट गया।

सैनिक दृष्टि से बल्ख़ अभियान सफल माना जाएगाः मुगलों ने बल्ख़ को जीत लिया और वहां से उन्हें उखाड़ फेंकने के ऊज़बेक प्रयत्न को भी नाकाम कर दिया। यह इस क्षेत्र में भारतीय सेना की पहली विजय थी और इस पर शाह जहां का उत्सव मनाना अनुचित नहीं था। तथापि खास लंबे समय तक बल्ख़ में अपना प्रभाव कायम रखना मुगलों के बूते से बाहर की बात थी। ईरानियों के मूक विरोध और स्थानीय जनता के शत्रुता के रुख के कारण मुगलों को अपना प्रभाव कायम रखना राजनीतिक दृष्टि से भी कठिन था।

इस सबके बावजूद बल्ख़ अभियान को विफल कहकर ख़ारिज नहीं किया जा सकता। ऊज़बेकों के बीच विभाजन होने से काबुल की सुरक्षा सुनिश्चित हुई, और भारत नादिरशाह के उदय के पूर्व लगभग सौ वर्षों तक बाहरी हमलों से सुरक्षित रहा।

मुगल-ईरानी संबंध—अंतिम चरण

मुगलों को जो आघात बल्ख़ में लगा था उसके बाद काबुल क्षेत्र में ऊज़बेक फिर से शत्रुतापूर्ण सक्रियता पर उतर आए और खैबर-गज़नी क्षेत्र में अफगान कबीले उपद्रव मचाने लगे। उससे ईरानियों का भी साहस बढ़ा और उन्होंने क़ंदहार पर आक्रमण करके उस पर अधिकार कर लिया (1649)। यह शाह जहां के अभियान को बहुत बड़ी ठेस थी। सो उसने क़ंदहार पर फिर से कब्जा करने के लिए अपने शाहज़ादों के नेतृत्व में एक-के-बाद-एक तीन हमले किए। पहला आक्रमण बल्ख़ के नायक

Scanned with CamScanner